आई.एस.एस.एन. संख्या : 2454–2458
नवरचना NAVRACHNA
www.grefiglobal.org/journals/navrachna2016
वर्ष 2 अंक 1–2, 2016, पृ. 44–60

जाति और जाति विनाश पर डा० अम्बेडकर का दर्शन, उनकी विरासत और जाति विनाश का समसामयिक यथार्थ

हरनाम सिंह वर्मा*

इस प्रपत्र में जाति और जाति विनाश विषय पर डा० अम्बेडकर के दर्शन, इन बिन्दुओं पर उनकी विरासत और उसके समसामयिक यथार्थ के चार पहलुओं पर चर्चा की जायेगीं।

1. डा० अम्बेडकर के पूरे लेखन, भाषणों और 40 वर्षो के सार्वजनिक जीवन के संघर्षो से क्या प्रमुख बिन्दु उभरते हैं?

2. क्या जाति विनाश प्रश्न पर डा० अम्बेडकर और डा० लोहिया की रणनीतियाँ धुर विरोधी न हो कर वास्तव में जाति विनाश की रणनीति के दो चरणों की रणनीतियों थी?

3. जाति विनाश की रणनीति को डा० अम्बेडकर के समर्थकों, विशेषकर कांशीराम और मायावती, ने क्या मूर्तरुप दिया है और उसकी कुछ समीक्षकों द्वारा 'विलक्षणता' के तमगे का साजाजिक–राजनैतिक धरातल पर असली रुप क्या है?

4. 2012 में जाति विनाश का क्या समसामयिक यथार्थ उभर कर आया है?

एक

डा० अम्बेडकर का जाति और जाति विनाश दर्शन

बाबा साहेब अम्बेडकर एक प्रकाण्ड विद्वान थे। लेखन, भाषाणों और राजनैतिक संघर्षो की संख्या, विषय वस्तु का विस्तार, प्रस्तुतीकरण की मौलिकता, उसकी गहराई, और तार्किकता, और विश्लेषित समस्याओं के दिये गए निदानों में साफ झलकता है। डा० अम्बेडकर का दर्शन चार मुख्य स्रोतों से प्राप्य है।

1. उनके घनिष्ट सहयोगी डा० भगवानदास (2000) ने चार खंडों में इसे प्रकाशित किया है।

2. प्रो० वैलेरियन रॉडरिग्यूस (2007) ने उसे "दि ऐसेन्शियल राइटिन्गस आफ डा० अम्बेडकर" की टाइटिल के अर्तगत संकलित किया है।

3. महाराष्ट्र शासन ने 27 खन्डों की डा० अम्बेडकर के दर्शन की एक संकलित श्रृंखला प्रकाशित की है।

---

*प्रोफेसर हरनाम सिंह वर्मा, अवकाश प्राप्त वरिष्ठ समाजशास्त्री–योजनाकार[1]

4. कुछ कृतियाँ स्वतंत्र रुप प्रकाशित है।

5. इनमे से सबसे वश्हद और महत्वाकाँक्षी प्रयास महाराष्ट्र शासन का है। कुल मिलाकर जो कुछ सामने आता है उससे साफ है कि यह इतना बड़ा कृतत्व है, जो मात्र अमूल्य और अतुलनीय ही नहीं है, बल्कि इसके बराबर की विद्वता किसी एक विद्धान ने पिछली एक शताब्दी से अधिक के समय में नहीं प्रदर्शित की।

महाराष्ट्र शासन द्वारा प्रकाशित बाबा साहेब अम्बेडकर के 27 खंडो मे से पाँच खंड (1, 3, 4, 5 और 7) जाति से प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप से सम्बन्धित हैं। इनमें से प्रथम खंड 1916 में उनके द्वारा कोलम्बिया विश्वविद्यालय की ऐ संगोष्ठी के लिए प्रस्तुत "भारत में जातियाँ, उनकी व्यवस्था, आर्विभाव और विकास" सबसे पहली रचना है। खंड 3 और चार हिन्दू धर्म के विभिन्न पहलुओं पर हैं। खंड 3 के तीन लेख (9. बौद्ध धर्म का विकास और पतन, 16 शूद्र और प्रति–क्रांति, और 17, महिलाएँ और प्रति–क्रांति) जाति व्यवस्था पर परोक्ष रुप से प्रकाश डालते हैं। खंड 4 का एक लेख (23. मनु का दीवानापन या ब्राह्मणों द्वारा मिली जुली जातियों का विवेचन) जाति से सम्बन्धित है। खंड 5 पूरा का पूरा अछूतों से ही सम्बन्धित है और उसके चार लेख (27. हिन्दुओं से अलग ;धर्म परिवर्तन), 28. जातियाँ और धर्म परिवर्तन, 29. अछूतों का ईसाईकरण, और 30. धर्म बदलने वालों की स्थिति) बाबा साहेब के जाति विनाश के लिए दिये गये उपायों से सम्बन्धित हैं। खंड 7 शूद्र कौन थे? वह हिन्दू–आर्य समाज में चौथा वर्ण कैसे बने?, विश्लेषित करता है। इसके अतिरिक्त खंड 9 के दोनों भाग (अ) काँग्रेस और गाँधी ने अछूतों के साथ क्या किया? और (ब) काँग्रेस और गाँधी और अछूतों का उद्धार विषय पर हैं। खंड 12 के तीन लेख (19. मनु और शूद्र, 20. सामाजिक व्यवस्था को स्थाई बनाये रखना, ओर 24. कौन ज्यादा खराब है? गुलामी या छुआछूत) जाति व्यवस्था से सम्बद्ध हैं। खंड 14 "बाबा साहेब और हिन्दू कोड बिल" पर है जो कि हिन्दुओं की कई कुरीतियों को दूर करने के लिए लाया गया था और जो काँग्रेसी चरम पंथियों के गहरे दबाव के कारण नेहरु सरकार ने वापस लिया। खंड 17 "डा० अम्बेडकर और उनकी सुधारवादी क्रान्ति" का दस्तावेज है और उनके द्वारा भारतीय समाज को सुधारने सम्बन्धी दिये गए और किये गए प्रयासों पर प्रकाश डालता है।

महाराष्ट्र शासन द्वारा प्रकाशित 27 खंडो के अतिरिक्त डा० अम्बेडकर के दो अन्य उपलब्ध प्रकाशन भी जाति व्यवस्था और उसके विनाश से ही सम्बन्धित हैं। इनमें 1936 में प्रकाशित बाबा साहेब अम्बेडकर द्वारा जाति पाति तोड़क मंडल के प्रस्तावित लाहौर सम्मेलन हेतु लिखित अध्यक्षीय भाषण "जाति विनाश", जिसे अन्ततः डा० अम्बेडकर ने मंडल द्वारा सम्बोधन के कुछ अंशों को निकाल देने की शर्त न मानते हुए नहीं दिया, सबसे ज्यादा प्रसिद्ध है। उनकी एक अन्य प्रकाशित कृति है, "अछूतो का उद्धार" (मुंबई, थैर्कस, 1943)। इन दो में से सबसे ज्यादा विवाद "जाति विनाश" पर हुआ है और उस पर एक गहरी नजर डालना आवश्यक है। इस कृति का संपादित प्रारुप अब इन्टरनेट पर भी उपलब्ध है। इसे कोलम्बिया विश्वविद्यालय की फ्रँासिस डब्लयू प्रिचेट ने क्लासरुम उपयोग के लिए विभिन्न शीर्षकों के साथ संकलित किया है। इसे 26 सेक्शनों तथा दो अनुसूचियों में वर्गीकृत किया गया है। इसके विभिन्न सेक्शन तालिका 1 में अंकित हैं।

तालिका 1 : जाति का विनाश	
सेक्शन	उप–विषय
एक	बाबा साहेब का तर्क कि वह जाति पाति तोड़क मंडल के संभावित अध्यक्ष क्यों नहीं हो सकते थे?
दो	सामाजिक सुधार राजनैतिक सुधारों के लिये क्यों जरुरी हैं?
तीन	सामाजिक सुधार आर्थिक सुधारों के लिये क्यों जरुरी हैं?
चार	जाति मात्र श्रम का विभाजन नहीं है, वह श्रमिकों का विभाजन है।
पाँच	जाति एक अविद्यमान "नस्लीय शुद्धता (रेसियल प्योरिटी) को नहीं बचा कर रख सकती।
छ	जाति हिन्दुओं को एक वास्तविक समाज या राष्ट्र बनाने से रोकती है।
सात	जाति व्यवस्था की सबसे खराब बात उसकी असामाजिक वृत्ति (insprit) है।
आठ	जाति आदिवासियों (ape originals) के विकास और समाज में समावेशित करने से रोकती है।
नौ	उच्च जातियों ने साजिश के तहत् निचली जातियों को दबा कर रखा है।
दस	जाति व्यवस्था हिन्दू धर्म को एक मिशनरी धर्म बनने से रोकती है।
गयारह	जाति हिन्दुओं को पारस्परिक सहायता, विश्वास और सौहार्दता देने से रोकती है।
बारह	जाति सभी सुधारों को रोकने का एक शक्तिशाली हथियार है।
तेरह	जाति सार्वजनिक सोच, सार्वजनिक मत, और सार्वजनिक कार्य कलापों को समाप्त करती है
चौदह	मेरा ध्येयः एक स्वतंत्रता, समानता और सौहार्द पर आधारित समाज
पंन्द्रह	आर्य समाजियों का चर्तुवर्ण क्या पुराने जाति चस्पों को जीवित रखता है।
सोलह	चर्तुवर्ण को व्यवहार में लाने में असंभव परेशनियों का सामना करना पड़ेगा।
सत्रह	शूद्रों के लिए चर्तुवर्ण बड़ी विकट प्रणाली होगी।
अठारह	चर्तुवर्ण कोई नयी चीज नहीं है, वह इतनी पुरानी है जितने कि वेद।
उन्नीस	हिन्दुओं में जाति वैसी नहीं है जैसे कि वह गैर–हिन्दुओं में है।
बीस	जाति के विनाश की असली कुँजी शास्त्रों को नकारने में है।
इक्कीस	जाति में अंदरुनी सुधार करना लगभग असंभव है।
बाइस	अभी तक कोई सुधार और तार्किकता की अपीलें सफल नहीं हुई हैं।
तेईस	जाति के विनाश से धर्म के सच्चे सिद्धान्तों का विनाश नहीं होगा।
चौबीस	एक सच्ची धर्मगुरु पद्धति (Priesthood) गुणों पर आधारित होनी चाहिए, न कि वंशानुक्रम के आधार पर।
पच्चीस	यदि हिन्दू समाज का विकास होना है, उसके रीति–रिवाजों को विकसित होते रहना होगा
छब्बीस	संघर्ष करना आपका काम है, मैने हिन्दू धर्म छोड़ने का निश्चय कर लिया है।
अनुसूची–एक	
गाँधी का हरिजन में प्रकाशित 'ए विन्डीकेशन आफ कास्ट' (अक्षरशः रुप में)	
अनुसूची–दो	
बाबा साहेब अम्बेडकर द्वारा गाँधी के लेख में उल्लेखित सभी बिन्दुवार उत्तर	

डा० अम्बेडकर के दर्शन को मात्र उनके लेखन और भाषणों से ही आँकना उनके साथ बड़ा अन्याय होगा। वह एक मानवसमाज शास्त्री, अर्थशास्त्री, विधि/संविधान वेता के अलावा अछूत समाज के ऐसे नेता थे, जिसने दलित अस्मिता को जगाने, पल्लवित और जुझारु रुप में प्रर्दशित करने, उन्हें अपने पाँव पर खड़े होने, संगठित, शिक्षित होकर, संघर्ष करने और कौशल विकसित कर अपने भविष्य को सुरक्षित करने का मार्गदर्शन किया। इस दृष्टि से उनके लेखन से ज्यादा उनके 40 वर्षो से अधिक के सार्वजनिक जीवन में दलितों के लिए जो संघर्ष उन्होंने किया उसने अपने में बहुत बड़ी विचारधारा का निर्माण किया है। इसलिए उसे भी आकलन में दृष्टिगत रखना वाँछित है।

डा० अम्बेडकर ने दलित अस्मिता की लड़ाई को एक सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक रणक्षेत्र में परिवर्तित किया और उन्होंने उनके सशक्तीकरण के चारों चरणों (राहत, संघर्ष, सुधार और पुर्ननिर्माण) में महती भूमिका निभाई। उन्होंने यह जान लिया था कि जाति व्यवस्था को एक ऐसा धार्मिक वैचारिक जामा पहनाया गया हैं जिससे उस पर उंगली न उठाई जा सके। इसीलिए उसका आधार कभी वेद, शास्त्र, उपनिषद् और कभी अन्य धर्म ग्रन्थ बताये गये। डा० अम्बेडकर ने अपने पूरे लेखन, भाषणों और राजनैतिक संघर्ष में जाति के इस ब्राह्मण वादी अमानवीकरण को अपनी तार्किकता से पूर्ण रुप से विखन्डित किया, दलितों की वर्तमान स्थिति को एक स्वाभिमानी चोला पहनाया, अशुद्धता के संकेतकों को स्वाभिमानी सकारात्मक रुप दिया, और उनके हारे और कुचले दलित इतिहास को एक जुझारु इतिहास का रुप दिया। उनके प्रयासों को दलित संघर्ष के कार्यक्रमों के संयोजन, इतिहास, साहित्य, राजनीति, लिंग सम्बधों, संस्कृति और पठन–पाठन में अभिव्यक्ति मिली और देश के समाज, अर्थतंत्र और राजतंत्र में उसका व्यापक प्रभाव देखा गया। गाँधी के साथ विश्व के फलक पर भी वह एक ऐसे महान व्यक्तित्व के रुप में उभरे, जिसे लम्बे समय तक याद किया जाता रहेगा।

डा० अम्बेडकरः एक मानव समाज शास्त्री के रुप में

मानव समाज शस्त्रियों का एक बड़ा धड़ा औपिनिवेशक और ब्राह्मणवादी सोच से ग्रस्त रहा है। इसके चलते उनमें से लुई डड्माँ (1970) ने "होमोहाईआरकिकस में तो जाति और वर्ण व्यवस्था में श्रेणीकरण की ढेर सारी अच्छाइयाँ और विशेषताएँ ढूँढ निकाली। कालान्तर में भी कैलाश नाथ शर्मा (1990) और विजय गायकवाड़ (1990, 1991ए) ने भी यही स्थापित करने का काम किया। अक्षय कुमार शरण ने तो हिन्दू व्यवस्थाओं और परम्पराओं को तो 'अपरिवर्तनीय' तक भी कह डाला (कृष्ण प्रकाश गुप्त 1974, 1978)। इसी प्रकार के समाज में परिवर्तन विश्लेषित करते समय मैसूर श्रीनिवास (1962, 1965, 1992) ने स्वयं को संस्कृतिकरण में तथा–कथित निचली जातियों द्वारा ऊँची जातियों के रीति रिवाज को अपनाने की प्रवृति पर ही केन्द्रित रखा, और ऐसा परिवर्तन जो ऊँची जातियों द्वारा निचली जातियों के रीति रिवाज या पेशे अपनाने (जैसा कि प्रो० श्याम लाल ने राजस्थान में कुछ ब्राह्मणों द्वारा मैला उठाने का पेशा अपनाने या प्रेमा कुरियन (2002) ने केरल के इझवा समुदाय के नवनिर्मित रिवाजों को नैय्यर समाज द्वारा अपनाने के अपने अलग–अलग चर्चित अध्ययनों ने दिखाया) को लगभग उपेक्षित ही रखा। नीता वर्मा (2005) और हरनाम सिंह वर्मा और अरुण कुमार सिंह (2005) ने अकाटय् प्रमाणों से यह सिद्ध किया है कि आरक्षण के विषय पर इंदिरा साहनी वाद (1992) तथा 2004 के केन्द्रीय शिक्षण संस्थानों में पिछड़ी जातियों वर्गो के छात्रों को प्रवेश में आरक्षणवाद में ऊँची जातियों के लगभग पूरे के पूरे समाज विज्ञानियों, समाचार और संचार माध्यमों में एकछत्र राज कर

रहे कर्मियों ने झूठ, धोखाधड़ी और गलत–बयानीं कर पिछड़े वर्गो, दलितों और आदिवासियों के साथ बेईमानी की। यहाँ तक कि उच्च न्याय पालिका ने भी आरक्षण के बिन्दु पर "डाकिट्रन आफ स्ट्रेयर डिसीसिस" (कन्टीन्वीटी, कनिससटेन्सी और सरटेन्टी) का पालन नहीं किया। (वर्मा 2005)। यह डा० अम्बेडकर की राजनैतिक सीख का ही प्रभाव था कि उनके अनुयायियों ने यह लड़ाई अपने पैर खड़े हो कर बार और न्याय पालिका में नगण्य प्रतिनिधित्व होने के बावजूद अपने कौशल से जीती।

ऊँची जातियों से सम्बन्ध रखने वाले मानव/समाज शास्त्रियों से बिल्कुल अलग डा० अम्बेडकर का पूरा जाति और जाति विनाश दर्शन तार्किकता और दलितों के स्वयं के झेले हुए अनुभवों पर आधारित है। उसका सच अन्य प्रमाणों की जरुरत नहीं रखता। इसके अतिरिक्त डा० अम्बेडकर के जाति और जाति विनाश दर्शन की उपादेयता इस लिये भी अतुलनीय है क्योंकि उसने भारतीय समाज में व्यवस्था परिवर्तन करने की नींव रखी और इसके लिए आधारभूत कदम उठाने की बात की।

डा० अम्बेडकरः कृतृत्व की सीमाएँ

गाँधी की तरह डा० अम्बेडकर भी एक प्रयोगधर्मी व्यक्तित्व थे और अपनी धुन के पक्के थे। उन्होंने स्वयं कहा कि आदिवासी, अन्य पिछड़े वर्ग, अल्पसंख्यक और महिलाएँ दलितों की तरह पीड़ित और सताये हुए हैं, लेकिन अपने लम्बे राजनैतिक संघर्ष में उन्होंने इन सभी को एक मंच पर लाने के डा० लोहिया और राम स्वरुप वर्मा, आदि के प्रस्तावों का ज्यादा गंभीरता से नहीं लिया। आलोचकों की माने तो काँग्रेस ने उनकी इस राजनैतिक स्थिति का पूरा लाभ लेते हुए उनसे चूहे–बिल्ली का खेल खेला और उनके राजनैतिक जीवन को हिन्दू कोड बिल और पहले संसदीय चुनावों में जोरदार झटका दिया।

उन्होंने जाति विनाश के लिए अंर्तजातीय विवाह और धर्म परिवर्तन की वकालत की। उन्होंने स्वयं बौद्ध धर्म अपनाया, लेकिन दलितों का बौद्ध धर्म या ईसाई धर्म ग्रहण करना, उनके दलित लबादे को न धो सका। उन्हें स्वयं धर्मान्तरण के दूसरे दिन ही अपने दलित अनुयायिओं को यह कहना पड़ा कि आरक्षण मिलता रहेगा। बौद्ध धर्म मे धर्मान्तरित दलित 1990 में ही यह आरक्षण पा सके और ईसाई बने दलित इसे पाने के लिये अभी भी बाट जोह रहें हैं।

1950 में ही संविधान सभा को निर्मित संविधान प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा था कि यह संविधान राजनैतिक समानता को तो प्रदान कर रहा है लेकिन सामाजिक और आर्थिक समानता लाना इससे सुलभ नहीं है। संविधान लागू हुए 62 वर्ष बीत गए हैं और यह विरोधाभास आज भी यथावत् है। उन्होंने दलितों को एकजुट होने का संकल्प दिलाया था। उनके अनुयायी इस पर खरे नहीं उतरे। उनमें आपस में ही संघर्ष हो रहा है। उनके परिश्रम के कारण दलितों का एक उपवर्ग जो उठ कर ऊपर आया था, वह अपने पीछे छूट गये दलितों से सांस्कृतिक रुप से कट गया था और उनकी स्थिति को सुधारने के उनके भगीरथ प्रयत्न में अपेक्षित साझीदारी नहीं कर रहा था। समाज के अन्य सभी शोषित उप वर्ग (आदिवासी, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक, महिलाएँ) और दलित अपनी–अपनी संशक्तीकरण की लड़ाई एक साथ नहीं, अलग अलग और भिन्न–भिन्न तरीके से लड़ रहे थे, जिससे शासक वर्ग बड़ी आसानी से निबट रहा था (क्रिस्टाफ जफरलाटः 2003) डा० अम्बेडकर अपने जीवन के अन्तिम वर्षो में इस स्थिति से बहुत निराश थे। 1954–1955 में वह अपनी रणनीतियों पर पुर्नविचार कर रहे थे और डा० लोहिया और अन्य राष्ट्रीय नेताओं से इस प्रश्न पर वैचारिक–आदान प्रदान के लिये भी तैयार हो गए थे। उनके आसामयिक निधन ने इन प्रयासों को फलीभूत होने का अवसर नहीं प्रदान करने दिया।

<u>दो</u>

जाति विनाशः डा० अम्बेडकर, डा० लोहिया और अन्य विचारक

जाति विनाश प्रश्न पर डा० अम्बेडकर के विचारों के समान्तर विचार डा० लोहिया (1962, 1963) तथा रामस्वरुप वर्मा (अर्जक संघ तथा अर्जकवाद के जनक) के थे। कुछ समीक्षक डा० लोहिया और राम स्वरुप वर्मा को डा० अम्बेडकर का धुर विरोधी मानते हैं जबकि योगेन्द्र यादव (2012) जैसे राजनीति शास्त्री कहते हैं कि डा० अम्बेडकर और डा० लोहिया (और राम स्वरुप वर्मा) सामाजिक न्याय के संघर्ष के दो चरणों के प्रणेता थे। डा० अम्बेडकर के दो घनिष्ट सहयोगियों, डा० भगवान दास (1998) और डा० छेदीलाल साथ (1992), ने अपनी–अपनी पुस्तकों में तथा इन दोनों और राम स्वरुप वर्मा ने लेखक के साथ इस बिन्दु पर 1996–1998 के बीच हुई लम्बी वार्ताओं में यह स्पष्ट किया कि डा० अम्बेडकर और डा० लोहिया जाति और जाति विनाश बिन्दुओं पर अलग–अलग ध्रुव केन्द्र थे। डा० लोहिया का जाति प्रश्न को केन्द्रबिन्दु बना कर आयोजित गैर–काँग्रेसवाद का पूरा राजनैतिक आन्दोलन, जो मुख्यतः उत्तर प्रदेश और बिहार में ज्यादा प्रभावी रहा और जिसने अन्ततः 1967 में काँग्रेस शासन की सत्ता को कई क्षेत्रों से उखाड़ा, डा० अम्बेडकर के देहावसान और राजनैतिक क्षितिज से चले जाने के बाद ही प्रभावी हुआ।

डा० अम्बेडकर और डा० लोहियाः कुछ समानताएँ

योगेन्द्र यादव (2010, 2012) के अनुसार दोनों विचारकों ने मार्क्सवादी विचारधारा से हटकर जाति ाकि भारतीय समाज में असमानता, शोषण और अन्याय के लिए एक स्वयं में स्वायत्त और महत्वपूर्ण कारक माना; दोनों ने इसमें लिंग और वर्ग की भी भूमिका स्वीकारी; दोनों ने जातिगत असमानता को प्राथमिकता के आधार पर खत्म करने की वकालत की, दोनों ने ही जाति को भारतीय समाज में बहुत सारी खामियों का जिम्मेदार माना; उन्होंने यह भी माना कि जाति व्यवस्था को सुध ारा नहीं जा सकता; उसे नष्ट ही करना होगा; दोनों ने यह माना कि मात्र आर्थिक क्षेत्र में समानता आने से जातिगत असमानता नहीं जायेगी और इसके लिये वैचारिक और धार्मिक मुद्दों पर भी ध्यान देना वांछित होगा।

योगेन्द्र यादव (2012) यह भी कहते हैं कि डा० अम्बेडकर के विचारों को अग्रसारित किया। उनके अनुसार डा० लोहिया जाति को हिन्दू समाज के स्थिर और ????????????? से आगे ले गये। उन्होंने जाति को एक संस्कृति के पतन की ओर अग्रसर प्रवृत्ति बताया। इसी वजह से डा० लोहिया ने जाति, वर्ग, लिंग और भाषा को एक दूसरे को प्रभावित करने वाला करार दिया। डा० लोहिया ने माना कि देश का शासक वर्ग अमीर, उच्च जातियों, और पुरुषों का है। इसलिए उन्होंने दलितो, आदिवासियों, अन्य पिछड़े वर्ग, मुसलमानों, और गरीबों की साझीदारी की बात की।

डा० लोहिया ने डा० अम्बेडकर के अंर्तजातीय खान–पान को जाति विनाश के लिये सही उपाय नहीं माना यद्यपि दोनों ने ही अंर्तजातीय विवाह को ज्यादा प्रभावी माना। डा० अम्बेडकर ने आध ुनिक राज्य मे शासन और लोकताँत्रिक राजनीति को जाति के विनाश के लिए उपयोग करने पर जोर दिया। इसके लिये उन्होंने आवश्यक संगठन और प्रक्रियाओं पर भी जोर दिया।

डा० अम्बेडकर और डा० लोहिया की राजनैतिक रणनीतियों में काफी भिन्न्ता

डा० अम्बेडकर ने दलितों के हिन्दू समाज से अलग इकाई के रुप में मानने के लिए संघर्ष किया। उनकी रणनीति में दलितों की विशिष्ट अस्मिता, विशिष्ट आवश्यकतायें और स्वतंत्र प्रतिनिधि

ात्व सम्मिलित थे। इन्हीं से जाति विनाश हो सकता था, ऐसा वह विश्वास करते थे। इन्हीं कारणों से डा० अम्बेडकर के लिए दलितों के लिये अलग निर्वाचक मंउल, आरक्षण और बौद्ध धर्म ग्रहण करना उन्हें सशक्त करने के रास्ते थे। एक दशष्टि से यह एक अलगाववादी (सेग्रीगेटिव) रणनीति थी, लेकिन इसमें एकीकरण (एग्रीगेटिव) के तत्व भी मौजूद थे। इसके द्वारा विभिन्न समुदायों में बिखरे सभी अछूतों को एक मंच पर एकत्रित करना था। लेबर पार्टी और रिपबिलकन पार्टी इस प्रयास के सांगठनिक हिस्से थे। वर्तमान समय की दलित राजनीति एकीकरण राजनीति की अविरल चल रही खोज है, जिसमें तमाम अंर्तविरोध (चमार–पासी, माला–मदिगा, जाटव–बाल्मीकी) विद्यमान हैं (वर्मा 2011, 2012, 2012 ए. बी)। डा० लोहिया के पास दलितों की दुविधा का उपाय था। वह सभी शूद्रों/शोषितों को एक साथ रखते थे। कालान्तर में दलित पेन्थर्स ने भी इसे ही अपनाने की बात की।

सांस्कृतिक धरातल पर डा० अम्बेडकर और डा० लोहिया

डा० लोहिया सभी शोषितों की धार्मिकता की आवश्यकता (स्प्रीचुयल नीड) को भलीभाँति पहचानते थे। उन्होंने पौराणिकों (माइथोलोजी) से ऐसे प्रति–चिन्ह (काउन्टर सिम्बल्स) और कथानक ढूँढ़े जो जाति व्यवस्था के विचारों से मेल खाते थे। इनमें चर्चित थेः राम की मर्यादा बनाम कृष्ण की अमर्यादा; द्रौपदी बनाम सावित्री; वशिष्ठ बनाम वाल्मीकि परम्परा; रामायण मेला। डा० लोहिया ने और ज्यादा खोजी (इन्वेनिटव) साँस्कृतिक राजनीति की वकालत की लेकिन वह ज्यादा स्पष्ट नही थी। यही उन कारणों में से एक महत्वपूर्ण कारण था जो डा० अम्बेडकर व डा० लोहिया को एक साथ लाने में बाधा बना।

तीन

दलितों का सशक्तीकरण– गाँधी, अम्बेडकर, कांशीराम–मायावती

भारत मे मोटे तौर पर दलित सशक्तीकरण के प्रयासों की दो राजनैतिक धाराएँ देखी गयी हैं। इनमें से एक का प्रतिपादन गाँधी ने किया और दूसरे का डा० अम्बेडकर ने। डा० अम्बेडकर की धारा को उनके अनुयायिओं, विशेषकर कांशीराम और मायावती ने, उसमें कुछ परिवर्तन ला कर एक नई दिशा दीं। जैसा कि इलीनर जीलट (1998) ने स्पष्ट किया हैं, गाँधी का सुझाया मार्ग कालान्तर में काँग्रेस पार्टी ने अपनाया। गाँधी का सुझाया मार्ग मात्र अस्पश्श्यता हटाकर अछूतों को समाज में सम्मानजनक स्थान देने की बात करता था। उसमें दलितों के सामाजिक–आर्थिक–राजनैतिक स्तर में व्यवस्था परिवर्तन लाने की कोई बात नहीं थी। गाँधी ने तो उनके हेय दशष्टि से देखे जाने वाले पुश्तैनी पेशों/सेवाओं में ही लगे रहने और पारम्परिक सेवाएँ प्रदान करते रहने की भी बात कही थी। गाँधी ने कई स्थानों पर दलितों को सम्मान देने की दशष्टि से उनकी बस्तियों में निवास भी किया और अपने वर्धा आश्रम में मल साफ करने का काम भी स्वयं किया। लेकिन गाँधी का दलितों को सम्मान देना और उन्हें बराबरी का दर्जा देने का उत्साह उनके शीर्ष राजनैतिम चेलों को कतई स्वीकार नहीं था। गाँधी की सरपरस्ती में बी० ए० मूर्ति, और जगजीवन राम जैसे अन्ध–अनुयायी और मूक दलित नेताओं को काँग्रेस की धारा में कुद राजनैतिक जगह और थोड़ा बहुत काम करने का अवसर जरुर दिया गया था लेकिन, जैसा कि इतिहासकार बी० बी० मिश्र (1974) बताते हैं, यह काँग्रेस की स्वाधीनता आन्दोलन में समाज के सभी हिस्सों को सम्मिलित कर अपने राजनैतिक आधार को विस्तारित और सुदश्ढ़ करने के उद्देश्य से ज्यादा किया गया था। इस प्रकार के राजनैतिक एकत्रीकरण

में दलितों को एक अन्ध–मूक अनुयायी के राजनैतिक उपवर्ग का ही दर्जा प्राप्त था, जिसकी गाड़ी की 'स्टीयरिंग व्हील' उच्च जाति वाले नेताओं के हाथ में थी। मौलना अब्दुल कलाम आजाद ने "इड़िया विन्स फ्रीडम" में यह बिना किसी लाग लपेट के लिखा है कि गाँधी, जिसने स्वतंत्रता आन्दोलन का नेतश्त्व कर उसे आकाश की ऊँचाइयों पर पहुँचाया, को भी काँग्रेस के शीर्ष नेतश्त्व ने स्वतंत्रता प्राप्ति के तीन वर्ष पूर्व ही काँग्रेस की राजनैतिक केन्द्र बिन्दु से किनारे कर दिया था। इसके कई गंभीर परिणाम, जिनमें देश का विभाजन एक था, देश को भुगतने पड़े। यहाँ पर दलितों के साथ गाँध ी और काँग्रेस द्वारा स्वतंत्रता आन्दोलन की चर्चित कुछ राजनैतिक घटनाओं का पुनरावलोकन समाचीन होगा। बहुत सारे शोधकर्ता तो डा० अम्बेडकर की दलितों का अल्पसंख्यक मानने और उनके अलग प्रतिनिधित्व की माँग का महत्व ही नहीं भाँप पाये हैं। डा० अम्बेडकर ऐसा इसलिये चाहते थे क्योंकि इससे दलितों को राजनैतिक क्षेत्र में प्रमुख और दिखने वाली महत्ता मिलती। लम्बे समय तक ऐसा होने पर इससे दलितों की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थिति देश भर में सुधरती। पूना पैक्ट ने यह सिद्ध किसा कि काँग्रेस ऐसा नही होने देना चाहती थी, क्योंकि दीर्घकाल में इससे उच्च जातिवर्ग की सामाजिक–राजनैतिक–आर्थिक स्थिति पर विपरीत प्रभाव पड़ता। डा० अम्बेडकर ने दलितों का भीषण रक्तपात रोकने के लिये अपनी यह माँग वापस ली। कालान्तर में इस प्रकार की राजनैतिक व्यवस्था के बिना भी दलितों का स्थिति में किस प्रकार का क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया जा सकता है, यह काशीराम–मायावती ने दिखा दिया है। उनका शोषण करते रहते हुए और उनका सशक्तीकरण न करते हुए दलितों को "टुकड़ा डालने" वाली काँग्रेसी नीति स्वतंत्रताप्राप्ति की पूरी समयावधि में अन्य राजनैतिक दलों के द्वारा भी चलाई जाती रही है। इसी नीति के कारण जगजीवन राम प्रधानमंत्री नहीं बन सके और मरणोपरान्त दिल्ली के राजघाट पर, जहाँ शासक वर्ग की अन्य राजनैतिक हस्तियों का अन्तिम संस्कार निष्पादित किया गया और जहाँ उनकी समाधियाँ है, न कर उनके बिहार के पैत्रिक जनपद सासाराम में किया गया।

डा० अम्बेडकर द्वारा तय की गई दलितों की सशक्तीकरण की नीति में उन्हें शिक्षित, संगठित होकर संघर्ष कर के अपने उत्थान के उद्देश्यों को प्राप्त करना था। उन्होंने यह सोचा था कि दलितों को राजसत्ता प्राप्त कर राज्यसत्ता के माध्यम से अपनी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति में सुधार करना होगा। अपने 40 वर्षो के राजनैतिक संघर्षो की श्रश्ंखला में उन्होंने दलितों की सोच में मौलिक परिवर्तन किया, उनमें अपनी अस्मिता और अस्तित्व को एक विशिष्टता के रुप में देखने, विश्वास करने और समाज के दूसरे वर्गो को दर्शित करने का विश्वास दिया। डा० अम्बेडकर ने दलितों में स्वयं को सम्मान देना सिखाया। दलितों ने उनके द्वारा प्रजाताँत्रिक व्यवस्था के द्वारा प्रदान करवाये गये अधिकारों का उपयोग पहले डगमगाते कदमों से और फिर बाद में कुछ दश्ढ़तापूर्वक करना सीखा।

डा० अम्बेडकर की राजनैतिक विरासत को काँशीराम–मायावती ने एक नया मोड़ दिया। इसका विवेचन विभिन्न समीक्षकों ने किया है। यह दो प्रकार के हैं:

एकः जिनमें बहुजन समाज पार्टी (बसपा) के, उत्तर प्रदेश के राजनैतिक क्षितिज पर छा जानने का ऐतिहासिक और क्रमिक कदमों सहित वर्णन है। इनमें से एक, राजकुमार रावण (2012) पर हम दृष्टि डालेंगे। दूसरा विवेचन ए० के० शर्मा (2004, 2007, 2009) का है, जिन्होने इसे एक नयी थ्योरी (ओसमासिस ओर रिवर्स सोशल ओसमासिस) के रुप में प्रस्तुत किया है। राजकुमार रावण ने

बसपा की दलित राजनैतिक ध्रुवीकरण शैली को सामाजिक एकीकरण का एक हथियार माना है। उनके अनुसार बहुजन (और सर्वजन) दलितों के एकीकरण का एक हथियार, एक रणनीति, एक विचार श्रश्रँखला, (आइडियालोजी) और एक संगठनात्मक पद्धति रहा हैं। इसमें जाति बन्धन तोड़कर बहुजनों के समाज का निर्माण किया गया है। इस व्यवस्था में 6000 साथ–साथ उत्पीड़ित जातियों को एक मंच पर लाकर भावनात्मक रुप से एकीकृत किया गया है। बसपा के लिये भारतीय संविधान ही उसका राजनैतिक मंतव्य (पोलीटिकल मैनीफैस्टो) रहा है। बसपा का संगठन समानान्तर रुप से प्रतिनिधित्व वाला है ओर भागीदारी की दशष्टि से उदारवादी। बसपा आन्दोलन ने दलितों पिछड़ों के महापुरुषों की विरासत को संजोकर एक साँस्कृतिक पूँजी निर्मित की है। उसने स्वाभिमान और न्याय को देश का एजेन्डा बनाया, आम नागरिकों को प्रजातंत्र का मालिक बनाया, और दलितों को बहिष्कृत किये गये वर्ग से हटाकर नये शासक बनाया है।

ए० के० वर्मा ने उत्तर प्रदेश के राजनैतिक क्षितिज पर सपा और बसपा के प्रभुत्व को "सोशल ओसमासिस" और "रिवर्स सोशल ओसमासिस", जिसमें विचार श्रश्रँखला (आइडियोलाजी) से जाति और जाति से विचार श्रश्रँखला का जातिगत इकाइयों के एक राजनैतिक ध्रुव से दूसरी ओर आते–जाते रहने से होता है, की एक थीसिस के रुप में किया है। ए० के० वर्मा यह भी कहते हैं कि जातिगत राजनीति में ही विचार श्रश्रँखला आधारित राजनीति के बीज समाहित होते हैं। बसपा की साँठिनिक विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए वह कहते हैं कि बसपा ने विभिन्न जातियों के ऊपर दलित राजनैतिक प्रभुत्व को पार्टी के सभी स्तरों तक इस्तेमाल किया है और इसमें एक और गैर–दलित जातियों की भागीदारी तो सुनिश्चित होती है, लेकिन राजनैतिक निर्णय इसके लिये नियुक्त संयोजको (कोआरडिनेटर्स), जो दलित ही होते है, पर होती है। वर्मा कहते है, कि प्रजाताँत्रिक व्यवस्था की यही खूबी है कि कुचले हुए और हाशिये पर रखे गये हुए वर्गो, जिन्हें अभी तक इस व्यवस्था से कोई लाभ नहीं मिला था, अब इसी व्यवस्था के सबसे बड़े प्रहरी बन कर उभरे हैं। इस जाति–आधारित राजनैतिक व्यवस्था के कारण राजनीतिज्ञों के व्यवहार में गुणात्मक बदलाव आया है। पार्टियों मे परिवारवाद उभरा है लेकिन अब यह भी साफ हो रहा है कि बगैर काम किये राजनीति में ज्यादा दिनों तक टिके रहना कठिन होता जायेगा।

अगर राजकुमार रावण का स्तुतिगान और ए० के० वर्मा की थ्योरी को एक तरफ रख कर बसपा के राजनैतिक प्रयोग पर एक गहरी दशष्टि डाली जाये, तो निम्न बिन्दु उभरते हैं। इस प्रयोग मे राजनैतिक और प्रशासनिक ढाँचे पर दलितों का प्रभुत्व स्थापित हुआ। इसके बहुजन हिताय से 'सर्वजन हिताय' की यात्रा में ब्राह्मणों को मायावती के चरणों में बैठकर काम करने में कोई संकोच नहीं होता; यह माडल दलितों का मात्र सामाजिक स्तर ही नहीं बदलता वरन् महत्वपूर्ण रुप से वह उनके आर्थिक और राजनैतिक स्तर को बहुत कम समय में बहुत अधिक बदलने का काम करता है; इसी प्रकार के दलित सशक्तीकरण के एजेन्डे के अंर्तगत मायावती ने 2011 में 50 नये आई. टी. आई और 4 नये मेडिकल कालेजों में 70 प्रतिशत सीटें दलितों के लिये आरक्षित कीं और पाँच लाख रुपये तक के सरकारी निर्माण के ठेकों में दलितों के लिए 23 प्रतिशत आरक्षण दिया। 2012 में होने वाले पाँच राज्यो की असेम्बली चुनावों पर इसकी दूरगामी चुनौती को भाँपते हुए केन्द्रीय सरकार ने भी दलितों के लिये चार प्रतिशत निर्माण ठेके देने के आरक्षण का निर्णय लिया। इस माडल ने नेहरु–गाँध ी परिवार के सांस्कृतिक सांकेतिक स्थलों को भी टक्कर देने का काम दलित/पिछड़े वर्गो के

महापुरुषों के नाम पार्को/स्मारक बनाने, जनपदों, के नाम रखने और विभिन्न विकास कार्यक्रमों के नाम देने से किया। यह सही है कि यह राजनैतिक माडल उत्तर प्रदेश इस लिये भी सफल हुआ है क्योंकि वहाँ दलितों का जनसंख्या में प्रतिशत 21 से अधिक है और अपने शोषण और उपेक्षा से तंग आ कर काफी बड़ी संख्या में अति पिछड़ों और मुसलमानों ने भी बसपा का दामन थाम लिया। यह भी सही है कि बसपा इस माडल को भारतीय जनतंत्र के किसी अन्य राज्य में अभी तक प्रत्यारोपित नही कर सकी है, लेकिन माडल के चमत्कारिक परिणामों की झलक तो दिखयी जा चुकी है।

क्रियान्वित रिवर्स सोसल ओसमासिस का असली चेहरा

राजकुमार रावण और ए० के० वर्मा के विश्लेषणों की एक गंभीर त्रुटि यह है कि वह जातिगत ध्रुवीकरण के आधार पर सत्ता प्राप्त करने के बसपा के राजनैतिक आचरण पर ही प्रकाश डालते हैं। डा० अम्बेडकर ने सत्ता प्राप्त करना मुख्य उद्देश्य नहीं इंगित किया था। बल्कि सत्ता के माध्यम से दलितों और वंचितो को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक रुप से सशक्तीकरकृत करना बताया था। बसपा ने पहले सपा, बाद में भाजपा और फिर अकेले ही सत्ता का किस प्रकार उपयोग/दुरुपयोग किया, इसकी जमीनी हकीकत यह दोनों ही समाज विज्ञानी नहीं दर्शित करते। ऐसा करने के लिए पार्टी और शासन की आन्तरिक, प्रायः जनता को न नजर आने वाली प्रक्रियाओं की आधिकारिक जानकारी होना आवश्यक है और वही कर सकता है जो समाज विज्ञानी के अतिरिक्त सत्ता व्यवस्था के उच्च स्तर का लम्बे समय तक का भागीदार और राजदार रहा हो। ऐसे विश्लेषण से बसपा की असलियत इस प्रकार उभरी है। बसपा 2007–2012 से बहुत पहले ही एक ऐसा संगठन बन चुका था, जो वृहद रैलियों के जरिये राजनैतिक प्रतिद्वन्दयों पर हावी होने का माहौल बनाता था। यह रैलियाँ काफी हद तक भाड़े की रैलियाँ होतीं थीं और इस समय भी ऐसा ही है। प्रत्येक क्षेत्र से बसपा के अधिकृत नेताओं को इसके लियं संख्या आंवटित होती थी, पैसा दिया जाता था, सरकारी मशीनरी का उपयोग (दुरुपयोग) कर वाहन उपलब्ध कराये जाते थे, रैली में लाये (आये नहीं) प्रतिभागियों को भोजन, आदि के अतिरिक्त प्रति व्यक्ति का भुगतान किया जाता था। [4]रैली स्थान की भव्य व्यवस्था का ठेका होता था। इसके लिए पैसे की व्यवस्था पार्टी से जुड़े राज्य प्रशासन के अधिकारी उगाही कर के किया करते थे। बामसेफ, डी० एस० 4 में मुख्य भूमिका सरकारी कर्मचारियों की होती थी। बसपा में भी ऐसा ही रहा। बसपा के लिये प्रारम्भ से ही मुख्यतः दलित प्रशासक अधिकारी ही पार्टी फन्ड एकत्र करवाते थे। मायावती के तीसरी बार मुख्य मंत्री बनने के उपरान्त पार्टी के पदाधिकारियों और चुने हुए विधायक/संसद सदस्यों को भी पार्टी फन्ड को जमा करने की एक निश्चित रकम देनी होती थी। [5]वह इसे प्रशासकीय दबाव से एकत्र करते थे। ऐसा करना इसलिए संभव था क्योंकि मायावती का शासन तुगलकी शासन रहा है। उसमें सारी सत्ता उनमें ही निहित थी। ठीक उनके नीचे अनेक्सी भवन, जहाँ उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री कार्यालय होता है, के पाँचवें तल पर मुख्यमंत्री के सभी प्रमुख सचिव होते थे, जो राज्य सराकार के बाहरी औपचारिक प्रशासनिक विभागों का नियंत्रण करते थे। इनमें ज्यादा लोग दलित संवर्ग के आई० ए ० एस०/पी० सी० एस० होते थे। यह संगठन सरकार के अन्दर वास्तविक सरकार होता था और जनपदों व मन्डलों के अधिकारियों को खौफज़दा रख कर मनमाना काम कराता था। इसमें मायावती का बड़े से बड़े आई ए एस/आई पी एस/पी सी एस को मौके पर निलबिंत करना और कहे अनुसार काम न करने पर प्रताड़ित करना पूरी नौकरशाही के मनोबल को जमींदोज कर मनमानी करने का मार्ग प्रशस्त करता था।

मायावती स्वयं राजनीति और प्रशासन दोनों ही को एक पक्षीय ढंग से चलाती हैं। बैठकों में वह बोलती हैं और बाकी सब सुनते हैं या उनके पूछे सवालों का जवाब देते है। वह निर्णय करती है, बाकी उस पर प्रश्न नहीं उठा सकते। 2012 की हार के बाद उनके चहेते शशांक शेखर सिंह को राज्य सभा भेजने का पार्टी के विधायकों द्वारा अप्रैल 2012 में रोक दिया जाना इसका अकेला अपवाद है। उन्होंने दलितों से सीधे सम्वाद की बात तो की, कुछ चुनिन्दा दलितों की बात भी सुनी, लेकिन जहाँ तक रिवर्स सोशल ओसमोसिमस के दूसरे ध्रुव, ब्राह्मणों की बात थी वह सतीश मिश्र के माध्यम से ही होता था। ओबीसीज मे से अति पिछड़े के लिए स्वामी प्रसाद मौर्य/ बाबू सिंह कुशवाहा और मुसलमानों के लिये नसीमुद्दीन सिद्दीकी थे। इस व्यवस्था की अनकही लेकिन सर्वविदित बात यह थी कि यह मुख्यतः मायावती के लिए थी, दूसरे दलितों के आकाओं के लिये थी परन्तु जो कुछ भी उन्हें प्राप्त होना था या हुआ उसे विशेषकर ओबीसीज, और उच्च जातियों और उनमें से भी क्षत्रियों के खर्चे पर होना था। ब्राह्मण भी इस व्यवस्था में एक बंदरबाँट के तहल शामिल हुए थे। वह पिछले लम्बे समय से मलाई, जिसे निंरतर खाने के वह पुश्तैनी रुप से आदी थे, से वंचित थे और, वोट के बदले इसे प्राप्त किया। लेकिन यह सभी ब्राह्मणों के लिये नहीं था और इसे सतीश मिश्र व उनके रिश्तेदारों तक सीमित रखा गया था। अन्य बातों के छलावे के साथ यह भी रिवर्स ओसमासिस का छलावा था। 2012 तक सामान्य ब्राह्मणों ने चुनावों में इसका प्रतिकार किया।

सैद्धान्तिक रुप से रिवर्स ओसमासिस में दोनों ध्रुव अगर उनसे अपेक्षित व्यवहार नहीं करते तो सारी रासयनिक प्रक्रिया फेल हो जाती है। 2012 के चनाव मे पश्चात् तमाम विश्लेषको ने बसपा के विभिन्न घटकों के विदक जाने की बात की है। वर्तमान लेखक ने 2007 में एक अंर्तराष्ट्रीय संगोष्ठी के मंच से बसपा के रिवर्स सोशल ओसमासिस माडल की उपरोक्त असलियत का कच्चा चिटठ्ा ए० के० वर्मा की मौजूदगी में ही दे दिया था (एच० एस० वर्मा 2007, 2009)। शुरु से ही बसपा का रिवर्स सोसल ओसमासिस एक छलावा रहा हैं और मायावती के चारों मुख्यमंत्रित्व कालों (पर विशेषकर 2007–2012) इसके खुले उदाहरण रहे है। इस ध्रुवीकरण प्रक्रिया से उग्र दलित प्रतिरोध, जिसका बड़ा प्रमाणिक विश्लेषण अनुपमा राव (2009) महाराष्ट्र के संदर्भ में करती हैं, उत्तर प्रदेश में भी फूटेगाा और बसपा इससे प्रभावित होगी।

उत्तर प्रदेशः रिवर्स सोसल ओसमासिस का 2012 का कडुवा सच

उत्तर प्रदेश के सामाजिक धरातल, बसपा और उत्तर प्रदेश शासन की भीतरी मशीनरी, प्रक्रियाओं और कार्यक्रम क्रियान्वन की वास्तविकता की आद्यतन और प्रमाणिक जानकारी के आधार पर उत्तर प्रदेश में रिवर्स सोसल ओसमासिस का 2012 का कडुवा सच निम्नवत उभरता हैः

– मायावती के दिखने वाले और वास्तविक राजनैतिक चोले अलग–अलग हैं।

– उनके शासन में मात्र उन्हीं में सारी की सारी सत्ता निहित थी। उस सत्ता का उपयोग/दुरुपयोग उनकी मर्जी पर निर्भर था। वह निरंकुश थीं और उन्होंने प्रशासन और पदाधि ाकारियों को जनता को बेधड़क लूटने का औजार बनाया।

– मायावती ने राजनैतिक विरोध को व्यक्तिगत दुश्मनी मे बदला और विरोध करने वालों को निरंकुश रुप से कुचला।

– इस प्रशासन मे दलितों द्वारा समाज के अन्य वर्गो का "रिवर्स डिस्क्रीमिनेशन" प्रशासन द्वारा और प्रिवेन्शन आफ एट्रोसिटीज अगेस्ट सिडीउल्ड कास्टस एन्ड सिडिउल्ड ट्राइब्स एक्ट, 1989 के माध यम से वसूली और शोषण के लिए कुछ इलाकों में व्यापक रुप में हुआ।

– पार्टी के विधायक/सांसद पार्टी के संचालकों (कोआरिडिनेटरो) द्वारा बेअसर कर दिये गए थे। सभी पदाधिकारियों की कारगुजारी पर जासूसी होती थी।

– विकास का कार्य मुख्यतः दलितों पर ही केन्द्रित कर दिया गया था। किसानों के हितों को नुकसान पहुँचाने का काम खुलेआम किया जा रहा था।

– जैसा कि ग्रेटर नौएडा और ग्रेटर नोएडा एक्सटेन्सन और गंगा और यमुना एक्सप्रेसवे प्रकरणों से उजागर हुआ, मायावती ने पीटर को लूट कर पाल (और स्वयं) को लाभान्वित किया।

– उत्तर प्रदेश के 65 साल के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के इतिहास में मायावती का 2007–2012 का शासन सबसे बड़ा संस्थागत भ्रष्टाचार का शासन था जिसमें कानून बिल्कुल ही ताक पर रख दिया गया था।6

– 2012 के असेम्बली चुनावों मे लगभग दो वर्ष पूर्व 2009 में ही मायावती जान गई थीं कि उनका पतन अवश्म्भावी है। उसे रोकने के लिए उन्होंने राज्य के लोकायुक्त की रिपोर्टों के आधार पर 23 मंत्रियों का बर्खास्त किया। चुनाव के समय लगभग 40 प्रतिशत विधायकों के टिकट भी काट दिये, लेकिन बुरी राजनैतिक हार को नहीं रोक पाई।

– मायावती के शासन करने के तरीके ने रिवर्स सोसल ओसमासिस की पूरी थीसिस को तार–तार कर दिया, जिसके चलते दलितों में से पासी, ओबीसीज में से कुछ अति पिछड़े अल्प–संख्यकों में मुस्लिम और उसके साथ सत्ता का सुख भोगने वाले ब्राह्मण उनसे बिदक गये। रिवर्स सोस ओसमासिस का प्रयोग उच्च जातियों द्वारा दलितों के शोषण की तरह अपने विरोधियों का उसी प्रकार का शोषण कर के प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सत्ता ज्यादा दिनों तक नहीं रह सकती। दूसरे, विकास मे भी दलितों के अलावा अन्य वर्गो के विकास को बन्द करना भी राजनैतिक दुष्परिणाम जरुर लायेगा। इस मायने में 2012 के उत्तर प्रदेश के चुनाव प्रताप भानु मेहता (2012) के शब्दों में वोटरों द्वारा पैट्रोनेज के ऊपर सशक्तीकरण, बीते समय के ऊपर भविष्य, खोखले शब्दाडम्बर के ऊपर ठोस काम, सनकीपन के ऊपर गंभीरता, हवाई कलाई बाजी के ऊपर जमीन से जुड़ा होना, और रुखी शिष्टता के ऊपर सधी हुई वास्तविकता को सही बताने का प्रयास था। इसका अर्थ यह नहीं हे कि रिवर्स सोसल ओसमासिस प्रयोग ही गलत था। असली बात यह है कि उसका दुरुपयोग हुआ और डा० अम्बेडकर के मिशन को सफलता की एक कौंध दिखा कर उसका पटाक्षेप हो गया।

चार

2012 में जाति, जाति विनाश का समसामयिक यथार्थ

अपने प्रकार की अनूठी संस्था के रुप में जाति ने उल्लेखनीय जीजीविषा दिखाई है। उसमे परस्पर विरोधी बदलाव और ठहराव की प्रवश्त्तियाँ देखी गई हैं। यह प्रवश्त्तियाँ सभी स्थानों और समय कालों में एक सी नहीं रही हैं और इसमें जो परिवर्तन हुआ है, उसने ऊँची और नीची और मझोली सीढ़ियों पर स्थित सभी जाति समूहों को प्रभावित किया है। यह सही है कि अपेक्षाकृत रुप से मंझोली और निचले क्रम की जातियों के स्तर में अधिक परिवर्तन आया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के 65 वर्षो में जाति में आये कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन निम्नवत हैः

– वर्ण व्यवस्था के अनुसार तथाकथित शूद्र वर्ण की कुछ मंझोली जातियों ने क्षत्रियों की भूमिका हथिया ली है। इनमें आँध्र के रेड्डी और कम्मा, कर्नाटक के गौड़ा और लिंगायत, महाराष्ट्र

के मराठा, केरल के नैय्यर और इझवा, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान के जाट, उत्तर प्रदेश व बिहार के यादव भी शामिल हैं।

– कुछ उच्च जातियों ने मंझोली जातियों को अपने में किसी स्वार्थवश समाहित किया है। (क्षत्रियों ने उत्तर प्रदेश में सैंधवार कुर्मियों और गुजरात में कोली दोनों ही राज्यों मे क्षत्रियों के पास आने वाली बहुओं की कमी थी, जिसे उन्होंने सैंधवार और कोली) समुदायों से उन्हें उच्च सांस्कृतिक स्तर प्रदान करने और सत्ता का सुख प्राप्त करने के छलावे से किया। यह प्रयोग दोनों ही जगह एक तरफा होने के कारण असफल रहा।

– शुद्रों के अपना शैक्षिणक और आर्थिक स्तर सुधारने के साथ राजसत्ता में हिस्सेदारी के पश्चात् वर्ग लक्षण उभर कर आये हैं। इसे तमिलनाडु, आँन्ध्र, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, हरियाणा में विशेष रुप से देखा गया है।

– भिन्न–भिन्न जाति समूहों में भाँति–भाँति के साँस्कृतिक बदलाव आये हैं। इनमें बी० के० सरकार/एम० एन० श्रीनिवास का साँस्कृतिकरण, कन्चा इल्लैया का दलितीकरण, रामस्वरुप वर्मा का अर्जकीकरण, श्याम लाल का प्रति–साँस्कृतिकरण, प्रेमा कुरियन का इझवाओं में नये संस्कारों का उदय और नैय्यर तथा अन्यों द्वारा उनका अनुसरण एवं धार्मिक व्यवहार के संदर्भ में नवबौद्धीकरण (विशेषकर महाराष्ट्र में), डेराकरण (पंजाब में) और आदिवासी समूहों द्वारा अपने स्थानीय आदिवासी धर्मो को छोड़ते हुए ईसाईकरण/हिन्दूकरण सम्मिलित हैं।

जाति के शुद्धता और अशुद्धता वाले सोच का उल्लेखनीय ह्रास हुआ हैं, लेकिन सभी जगह एक सा नहीं। मानव/समाज शास्त्रीय अध्ययन कहते हैं कि दक्षिण में यह उत्तर की अपेक्षा जयादा कम नहीं हुआ।

– जाति का राजनीतिकरण और सेक्यूलाराइजेशन हुआ है और देश की राजनीति में वह एक उल्लेखीय भूमिका निभा रही है। पहले जाति शोषण और अपंवचन के लिए ज्यादा कुख्यात थी, अब इसके माध्यम से शूद्रों का सशक्तीकरण हुआ और तथाकथित उच्च जातियों को उनके सामने अब नरम होना पड़ा है।

– जाति पश्थकीकरण को कम भी कर रही है और वंचित वर्गो, विशेषकर दलितों को अपने दलित चोले में ही घिरे रहने को प्रेरित कर रही है।

– कुछ अपवादों को छोड़ कर जाति और आदिवासी सम्पर्क (इनकाऊँटर), आदिवासियों के लिए घातक साबित हुआ है। आदिवासी क्षेत्रों में गैर–आदिवासियों के बसने, उनके क्षेत्रों की खनिज और अन्य प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और बड़ी–बड़ी अवस्थापना परियोजनाएँ क्रियानिवत करने से आदिवासियों को विस्थापित किया गया है, उन्हें पारम्परिक सम्पदाओं के उपयोग से वंचित और बहुत अधिक शोषित किया गया है। अंग्रेजी शासन में पहले मिशनरीज ने उन्हें ईसाई बनाया, अब कट्टर हिन्दूवादी उनके स्वतंत्र स्थानीय धर्मो, भाषा और रीति रिवाजों को समाप्त कर रहे हैं।

दलित जाति प्रश्नः सम–सामयिक वास्तविकता

नेशनल सैम्पल सर्वेक्षणों और नेशनल फेमिली हेल्थ सर्वेक्षणों के आद्यतन अध्ययन बताते है कि काफी दलित वर्ग अभी भी गरीबी की योजना आयोग द्वारा निश्चित रेखा से नीचे है, उनका शैक्षिक और स्वास्थ्य स्तर नीचा है और उनकी आर्थिक स्थिति भी बहुत शोचनीय है। इसके बावजूद स्वतंत्रता प्राप्ति के 65 वर्ष बाद उनकी स्थिति में दिख पड़ने वाला सुधार हुआ है। सुखदेव थोरट और अमरेश

दुबे के 2011 के एक अध्ययन के अनुसार उनकी आमदनी बढ़ी है और पहले की अपेक्षाकृत गरीबी घटी हैं। वर्मा 2003 के एक अध्ययन के अनुसार उत्तर प्रदेश में सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से मुसलमान सबसे निचले पायदान पर हैं, उसके बाद दलित।

वर्मा (2006, 2009) तथा कपूर, चन्द्रभान प्रसाद व अन्य (2010) के एक अध्ययन के अनुसार दलितों के पेशों में बदलाव हुआ है। उनमें काफी लोग बटाईदार औ सीमान्त किसान बने हैं और सीमान्त किसान बने हैं और कुछ छोटे मोटे व्यवसाय भी करने लगे हैं। महाराष्ट्र और पंजाब में तो वह उद्यमी भी बने हैं और उनका फिक्की की तर्ज पर अपना उद्यमी संगठन, डिक्की भी बन चुका है। दिसम्बर 2011 में उन्होंने मुम्बई की बान्द्रा–कुर्ला क्षेत्र में अपनी एक औद्योगिक उत्पादों की एक प्रदर्शनी भी लगाई।

दलितों में एक मलाई की पर्त (क्रमीलेयर) भी बन गई है जिसे दलित पैंथर्स ने "दलित ब्राह्मणों" की संज्ञा दी है। 62 वर्षो से आरक्षण का 99 प्रतिशत लाभ दलितों और आदिवासी समूहों के मात्र 5–10 समूह ही उड़ाते रहे हैं और एक दलित (ओ० पी० शुक्ल) ने इसे सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती भी दे डाली है। लम्बे समय में सत्तारुढ़ शासक इसको बदलाना टालते रहे हैं।

पहले मुगल, फिर ब्रिटिश शासन काल में दलितों को इस्लाम और ईसाई धर्म मजबूरी और प्रलोभन के लिये लेना पड़ा। डा० अम्बेडकर के आह्वान पर उन्होंने बौद्ध धर्म अपनाया। लेकिन उनके दलित चोले ने उनका दामन इन बदले हुए धर्मो में भी न छोड़ा और वहाँ भी उन्हें निम्न दर्जा ही मिला। सिक्ख दलितों ने तो अपना अलग सिक्ख दर्शन ही बना कर अपने अलग गुरुद्वारे और डेरे स्थापित कर लिये हैं।

दलित सोच में व्यापक परिवर्तन आया है। महाराष्ट्र में दलित पैंथर्स ने एक उग्र अस्मिता दिखाई थी, जिसका मराठा समाज ने बर्बर तरीके से प्रतिकार किया था। दलित अग हर राज्य में कहीं कम कहीं ज्यादा अपनी स्वतंत्र और विशिष्ट अस्मिता को दर्शित कर रहे हैं। लेकिन दलित जाति एक ऐसा प्रश्न हैं जिसे दलितों को संतोषजनक रुप से हल करने के लिए भारतीय समाज के अन्य हिस्सों (उच्च जातियाँ, ओबीसीज, तथा आदिवासी) की अस्मिता सीधे प्रभावित होती है। दलितों का अस्मिता प्रदर्शन दूसरों की अस्मिता पर प्रभाव डालता है और वह अपनी केन्द्रीय प्रधानता कम करने को आसानी से राजी होते नजर नहीं आते। यही यथार्थ हैं।

टिप्पणियां

1. यह प्रपत्र महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय विद्यायल, वर्धा की डा० अम्बेडकर पीठ द्वारा, 29–31 मार्च 2012 को आयोजित एक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में लेखक द्वारा प्रस्तुत विचारों का लिखित रुप है।

2. इस प्रपत्र के लेखन की लेखक की अपनी विशिष्ट व्यक्तिगत और प्रोफेशनल पृष्ठ भूमि है। यह विशिष्टता आठ बिन्दुओं से सम्बन्ध रखती है।

एकः छात्र के रुप 1954–55 में बाराबंकी, उत्तर प्रदेश में डा० राम मनोहर लोहिया से जाति, जातिगत शोषण और विनाश के संघर्षों पर उनके विचारों का सीधे प्राप्त मार्गदर्शन

दोः डा० अम्बेडकर के घनिष्ट सहयोगियों डा० भगवानदास और डा० छेदीलाल साथी तथा डा० लोहिया से जाति प्रश्न पर शास्त्रार्थ कर चुके महारथी और अर्जक संघ और अर्जकवाद के जनक राम स्वरुप वर्मा से 1996–1998 में की गई लम्बी वार्ताए

तीनः पिछड़ी जाति का होने के कारण राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर का प्रोफेशनल प्रतिष्ठित कार्य सम्पादित करने के बावजूद देश की लब्ध प्रतिष्ठित संस्थाओं में कार्यरत होते हुए अपमानित, तिरस्कृत, पीड़ित और वंचित किये जाने का भोगा हुआ निजी अनुभव (वर्मा 2006)

चारः उत्तर प्रदेश पिछड़ा वर्ग आयोग (1996–1998), और अम्बेडकर महासभा उत्तर प्रदेश में 1989–1998 में ओबीसी और दलितों के उत्पीड़न सम्बन्धी क्रमशः अर्ध–न्यायिक और एक से संघर्ष में लिंक पिन का कार्य सम्पादन

पाँचः इन्दिरा साहनी (1994) के बाद में उत्तर प्रदेश शासन के प्रतिनिधि के रुप में जाति विषयक समाजशास्त्रीय अध्ययनों का सम्पादन और बाद की अवधि (1989–1992) में उत्तर प्रदेश शासन और उच्चतम न्यायालय में शासन के विधिक प्रतिनिधियों के बीच लिंक पिन का कार्य

छः अरुण शौरी के "वारशिपिंग फाल्स गाडस" के प्रत्युत्तर में डा० अम्बेडकर के संविधान निर्माण पर शौरी की शैली को तार–तार करता हुआ और डा० अम्बेडकर के योगदान के अनूठेपन को पुर्नःस्थापित करता हुआ चर्चित शोधपत्र(वर्मा 2013)

सातः मानव/समाज विज्ञानियों के द्वारा भारतीय समाज, उसकी परम्पराओं, संस्थाओं और प्रक्रियाओं पर किये गए शोधों पद्धितियों में विद्यमान त्रुटियों का सहपाठी और मित्र कृष्ण प्रकाश गुप्त (1974, 1978) के पश्चात् स्वयं का चर्चित पुर्नमूल्यांकन (वर्मा 1980)

आठः दलित प्रश्न पर हाल के वर्षों का स्वयं का शोध कार्य (वर्मा 2007, 2009, 2011, 2012, 2012 ए.बी.।)

3. इनमें उन कृतियों को नहीं सम्मिलित किया गया है जो डा० अम्बेडकर के दर्शन पर ही हैं, लेकिन जिन्हें उन्होंने स्वयं नहीं लिखा।

4. बसपा के समर्थक इस मुद्दे पर यह कहते हैं कि रैलियों में मुख्यतः दलित और अति पिछड़े वर्ग के विपन्न दैनिक कार्य कर रोजी चलाने वाले लोग होते हैं। रैलियों में आने पर उनकी उन दिनों की मजदूरी से हाथ धोना होता है। उन्हें रैलियों के लिये दिया जाने वाला धन आंशिक रुप से इस हानि की भरपाई है।

5. कुछ वर्ष पूर्व इस तथ्य की तस्दीक अमर सिंह, जब वह सपा के महासचिव हुआ करते थे, ने बसपा विधायकों की एक बैठक, जिसे मायावती ने सम्बोधित किया था, की सी० डी० सार्वजनिक करके की थी। इस सीडी में मायावती ने कथित रुप से विधायकों से अपने लोकल एरिया डेवलपमेंट फंड से एक हिस्सा पार्टी को देने के लिए कहा था। बसपा में पार्टी फंड ओर मायावती को व्यक्तिगत भुगतान में कोई फर्क नहीं होता। कानूनी पचड़े से बचने के लिये बसपा के ब्राह्मण चेहरे और कानूनविद सतीश मिश्र की सलाह पर मायावती को भुगतान थोड़ी–थोड़ी रकम भिन्न–भिन्न नाम, पते और एक शपथपत्र के साथ की जाती है और उसमें मायावती को दिये गये धन को जैसा वह चाहें उपयोग करने के लिए अधिकृत भी किया जाता है। संस्थागत भ्रष्टाचार की एक सांगठनिक व्यवस्था काँग्रेस, भाजपा, और सपा सभी पार्टियों के शासन में भी रही है लेकिन बसपा में इसका आयाम बिल्कुल निराला रहा है। अन्य पाटियों में इस छिपी व्यवस्था में सम्बन्धित विभागीय मंत्री, अधिकारी, और एकाध बिचौलिए रहते थे और प्राप्त रकम का कुछ हिस्सा पार्टी प्रमुख मुख्यमंत्री को जाता था। बसपा में ऐसा पूरा तंत्र स्वयं मायावती के पास रहा है और मंत्रियों का महत्व बहुत कम रहा है। मायावती ने यह सारा खेल पंचम तल के अफसरों का सरपरस्ती में लगभग खुलेआम करवाया। नसीमुद्दीन सिद्दकी और बाबू सिंह कुशवाहा इसका अपवाद मात्र थे।

6. मायावती के कई गैर कानूनी तुगलकी निर्णयों को इलाहाबाद हाई कोर्ट की मुख्य और लखनऊ पीठों ने खारिज किया था, लेकिन उच्चतम न्यायालय की कुछ पीठों, जिनका दलित मुख्य न्यायाधीश जस्टिस बालकृष्ण नेतस्त्व करते थे, ने काफी राहत प्रदान की।

7. इसका विस्तृत विश्लेषण वर्मा (2011, 2012, 2012 ए. बी.) में देखा जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ

भीमराव अम्बेडकर, 1943 दि इमोन्सिपेशन आफ दि अन्टचेबिल्स, मुम्बई, थैंकर्स।

जोई अरुण, 2003 कान्स्ट्रकिटंग दलित आइडेनिटटी, जयपुर रावत पब्लिसर्स।

देवेश कपूर, चन्द्रभान प्रसाद, लेविट प्रीट थेट एण्ड डी० श्याम बाबू, 2010ः रीथिनिकंग इन्इक्वेलिटीः दलित्स इन यू० पी० इन मार्केट रिफार्म इरा, नई दिल्ली, इनिडयन इन्सटीटयूट आफ दलित स्टडीज।

प्रेमा कुरियन, 2002 क्लाइडोस्कोपिक इथनीसिटीः इन्टरनेशनल माइग्रेसन एन दि रिकान्स्ट्रक्सन आफ कम्यूनिटी आईडेन्टेटीज इन इनिडया, र टगर्स युनवीर्सिट प्रेस।

विजय रामेशवर राव गायकवाड़, 1991, 1191एः इन प्रेज आफ कास्टः एक ट्रीव्यूट टू मनु दि ला गिवरः ऐन इन्क्वारी इन टू फिलासोफी आफ वर्क एन्ड स्ट्रेटीफिकेशन, पार्ट पृए एन्ड प्प्, अहमदाबाद, इनिडयन इन्सटीटयूट आफ मैनेजमेन्ट।

मार्क गैलेन्टर, 1990 : कम्पीटिंग इक्वैवलिटीजः दि ला एन्ड दि बैकवर्ड क्लासेज इन इनिडया, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस

कृष्ण प्रकाश गुप्त, 1974 : सोसालजी आफ इनिडयन ट्रेडीसन एन्ड ट्रेडीसन आफ इनिडयन सोसालजी, सोसालिजीकल बुलेटिनः 23ः1ः 14–43

1978 : रेलीजन इन रामपुरा : दि एन्थ्रो–पालिजकल एप्रोज रिवीजिटेड, कन्ट्रीब्यूसन्स टू इनिडयन सोसालाजी (न्यू सीरीज) : 12ः1ः97–108

क्रीस्टाफ जफरलाट, 2003 : इनिडयाज साइलेन्ट रिवूलूसनः दि राइज आफ लो कास्टस इन नार्थन इनिडया, नई दिल्ली, परमानेन्ट ब्लैक।

इलीनर जीलाट,1996 : फ्राम दि अनटवेबल टू दलितः इसेजेस इन अम्बेडकर मूवमेन्ट, नई दिल्ली, मनोहर लुई डड्मा, 1970 : होमो हाइरिकिक्सः दि कास्ट सिस्टम एन्ड इटस इम्पलीकेसन्स, शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस

सुखदेव थोरट एण्ड अमरेश मिश्र, 2011 : कास्टस इन ए डिफरेन्ट मोल्ड, नई दिल्ली।

महाराष्ट्र शासनः डा० भीम राव अम्बेडकर की कृतियों, 27 खड़ों में, बसन्त मून (सम्पादक), मुम्बई

प्रताप भानु मेहता, 2012 : व्हाट रिजल्टस आफ यू.पी. स्टेट असेम्बली इलेक्शन्स इन फेब्रुयरी 2012 मीन? इनिडयन एक्सप्रेस, 7 मार्च।

बी० बी० मिश्र, 1974 : दि इनिडयन पोलीटिकल पार्टीजः ए हिस्टोरिकल एनालिसिस आफ पोलिटकल बिहैवियर अप टू 1947, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

अनूपमा राव, 2009: दि कास्ट क्वश्चनः दलित्स एन्ड दि पालिटिक्स आफ माडर्न इनिडया, रानीखेत, परमानेन्ट ब्लैक।

राजकुमार रावण, 2012 : "बीएसमी ऐज ऐन इन्स्ट्रमेन्ट आफ सोशल इन्क्लूजन पश्ष्ठ–566, 581 इन आर बी० एस० वर्मा, आर० के ० सिंह एन्ड पूजा वर्मा (सम्पादक), शेडस आफ इन्क्लूजन एन्ड इक्सक्लूजन इन इनिडया, लखनऊ, न्यू रायल बुक कम्पनी।

राम मनोहर लोहिया, 1962 : दि कास्ट सिस्टम, हैदराबाद, नवयुग।

राम मनोहर लोहिया, 1963 : मार्क्स, गाँधी एन्ड सोसिलज्म, हैदराबाद, नवयुग।

वैलरियन राड्रेजिजेस, 2007 : दि इसेनिसयल राइटिंग्स आफ बी० आर० अम्बेडकर, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस।

भगवान दास,2000 : दस स्पोक अम्बेडकर, चार खंडों में, लखनऊ, दलित टुडे प्रकाशन।

भगवान दास 1996 : बाबा साहेब अम्बेडकरः एक परिचय–एक संदेश, लखनऊ, दलित टुडे प्रकाशन

भगवान दास 1996 : बाबा साहेब अम्बेडकर और भंगी जातियाँ, लखनऊ, दलित टुडे प्रकाशन

छेदीलाल साथी, 1992 : भारत की आम जनता शोषण से मुक्त वा अधिकार युक्त कैसे हो, लखनऊ, बहुजन कल्याण प्रेस

कैलाश नाथ शर्मा, 1990 : वर्ना एण्ड जाति इन इनिडयन ट्रेडिनल पर्सपेकिटव, सोसालाजीकल बुलेटिन : 39 : 1 एन्ड 2 : 15–32

मैसूर श्रीनिवास, 1962 : कास्ट इन इनिडया एन्ड अदर एसेज, मुंबई, एशिया।

मैसूर श्रीनिवास, 1965 : सोशल चेंज इन माडर्न इनिडया, मुंबई, एशिया।

मैसूर श्रीनिवास, (सम्पादक), 1992 कास्ट इन इटस टवन्टीयथ सेंचुरी अवतार, नई दिल्ली, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस।

योगेन्द्र यादव, 2010 : व्हाट इज लिविंग एन्ड व्हाट इज डेड इन राम मनोहर लोहिया, इकोनामिक एन्ड पोलिटिकल वीकली (लोहिया अंक), अक्टूबर

योगेन्द्र यादव, 2012 : अम्बेडकर एन्ड लोहियाः ए डायलाग आन कास्ट, सेमिनार : 629

हरनाम सिंह वर्मा, 1980 : पोस्ट इन्डेपेन्डेन्स चेंज इन रुरल इनिडयाः ए पाइलट स्टडी आफ एन उत्तर प्रदेश विलेज, नई दिल्ली, इन्टर–इनिडया पब्लीकेसन्स।

हरनाम सिंह वर्मा, 1982 : करेक्टर एन्ड फन्कसनिंग आफ रुलिंग पार्टीस एन्ड फेडरल पोलिटी इन इनिडया, पश्ष्ठ 170–205 इन के मैथ्यू कुरियन एन्ड पी० एन० वरघीस (सम्पादक), सेन्टर–स्टेट रिलेसन्स, नई दिल्ली, मैकमिलन्स,

हरनाम सिंह वर्मा, 1997 : डा० बी० आर० अम्बेडकर एन्ड फ्रेमिंग आफ दि इनिडयन कान्स्टीटूश्यन ए कन्टेमपोरेरी रिअसेसमेन्ट, पेपर प्रेजेन्टेड टू दि सेमिनार आन डा० अम्बेडकर एन्ड फ्रेमिंग आफ दि इनिडयन कान्स्टीटयूसन, बी० आर० अम्बेडकर युनिवर्सिटी, लखनऊ, 6 अप्रैल

हरनाम सिंह वर्मा, 2005 : इवूलूसन आफ केस ला आन कम्पेनसेटरी डिस्क्रीमिनेशन (1950–1990): ए कन्टेम्पोरेरी रिअसेसमेन्ट आफ मार्क गैलेन्टर एन्ड हायर जुडीसियरी इन इनिडया फ्रामदि प्वाइन्ट आफ व्यू आफ

दि ओबीसजी, पश्ष्ठ 325–342 इन हरनाम सिंह वर्मा (सम्पादक) दि ओबीसीज एन्ड दि रुलिंग क्लासेज इन इनिडया, नई दिल्ली एन्ड जयपुर, रावत पबिलकेसन्स।

हरनाम सिंह वर्मा, 2006 : डेवलेपमेन्ट एन्ड डिप्राइवेशनः रिलेटिव स्टेटस आफ डिफरेन्ट सोसल कटेगरीज इन उत्तर प्रदेश इन दि पोस्ट–इन्डेपेन्डेन्स पीरियड, पश्ष्ठ 84–103 इन डी० एम० दिवाकर एन्ड जी० पी० मिश्र (सम्पादक), डिप्रावेशन एन्ड इन्क्लूजिव डेवलपमेन्ट, नई दिल्ली, एन्ड लखनऊ, मानक एन्ड गिरि इन्स्टीटयूट आफ डेवलपमेन्ट स्टडीज।

हरनाम सिंह वर्मा, 2006 : व्हाट इट मीन्स टू बी एन ओबीसीज इन दि लाइव कार्टस आफ इनिडयन सोसायटी, इकोनमी एन्ड पोलिटी? इन हरनाम सिंह वर्मा, (सम्पादक)दि ओबीसीज एन्ड दि डाइनिमिक्स आफ इक्यूलूजन इन इनिडया, नई दिल्ली, सीरियल पबिलकेशनस।

हरनाम सिंह वर्मा, 2006 : दि ओबीसी आइडेनिटटी एन्ड ट्रीटमेन्ट आफ दि ओबीसीज बाई दि मेनस्ट्रीम रुलिंग पोलीटिकल पार्टीज इन इनिडया, पश्ष्ठ 144–209 इन हरनाम सिंह वर्मा (सम्पादक), दि ओबीसीजकृकृ

हरनाम सिंह वर्मा, 2006 : रिलेटिव स्टेटस आफ डिफरेन्ट सोशल कटेगरीज इन यू०पी० इन दि पोस्ट–इन्डेपेन्डेन्स पीरिएड, सेकेन्ड काँशीराम मेमोरियल लेक्चर, आरगनइज्ड बाई दि काँशीराम शोध पीठ, डिपार्टमेन्ट आफ सोशल वर्क, यूनीवर्सिटी आफ लखनऊः 15 मार्च।

हरनाम सिंह वर्मा, 2009 : डेवलपमेन्ट इन उत्तर प्रदेशः इमरजन्स आफ कल्चर आफ बैकवर्डनेस, पश्ष्ठ106–151 इन अरुण कुमार सिंह (सम्पादक) स्टडीज इन सोसल इक्सक्लूजन इन इनिडयन सोसाइटी, लखनऊ, न्यू रायन बुक कम्पनी।

हरनाम सिंह वर्मा, 2011 : कास्ट, कास्ट क्वसचन एन्ड दलित क्वसचन, इस्टन अन्थ्रोपोलोजिस्टः 64 : 4:

हरनाम सिंह वर्मा, 2012 : एस. सीजः फ्राम दि अनटचैबुलत टु दि दलितस, टू दलित इन्ट्रपन्थोस, पश्ष्ठ 342–377 इन आर बी० एस० वर्मा आर. के सिंह, और पूजा वर्मा (सम्पादक), शेडस आफ इनकलूजन एन्ड इक्सक्लूजन इन इनिडया, लखनऊ, न्यू रायल बुक कम्पनी

हरनाम सिंह वर्मा, 2012ए : दि दलित्स, एन्ड दि स्टेट इनीशियेटिव्स इन इनिडया, पेपर प्रेजेन्टेड टु दि इन्टर साइन्स काँग्रेस आन अन्थ्रोपोलोजी–2012, डिपार्टमेन्ट आफ अन्थ्रोपोलोजी, लखनऊ युनिवर्सिटी, लखनऊ।

हरनाम सिंह वर्मा, 2012बी : कास्टइज्म एन्ड कास्ट कान्फलीक्टस इन नदीम हसनैन और हरनाम सिंह, भारतीय की समसामयिक सामजिक समस्यायें, (प्रेस में)

हरनाम सिंह वर्मा एन्ड अरुण कुमार सिंह, 2005 : डिबेट आन आइडेन्टीफिकेशन, सिडीउलिंग एन्ड रिर्जवेशन फार दि ओबीसीजः मिसडाइरेक्शन, डिस्इन्फारमेशन एन्ड पारटीजनसिप बाई मेनस्ट्रीम सोशल साइनिटस्टस पश्ष्ठ 278–324. इन हरनाम सिंह वर्मा (सम्पादक), दि ओबीसीज एन्ड दि रुलिंग क्लासेज इन इनिडया, नई दिल्ली और जयपुर, रावत पब्लीकेशनस।

हरनाम सिंह वर्मा, राम अभिलाष वर्मा एन्ड जय सिंह 2006 पावर शेयरिंग बाई डिफरेन्ट सोसल कटेगेरीज : इक्सक्लूसिविटी एन्ड एक्सक्लूजन इन उत्तर प्रदेश विफोर दि इन्ट्रोडक्शन आफ, 27 परसेन्ट रिर्जवशेन फार दि ओबीसीज इन हरनाम सिंह वर्मा (सम्पादक), दि ओबीसीज एन्ड दि डाइनामिक्स आफ सोसल इक्सक्लूजन इन इनिडया, नई दिल्ली, सीरियल पब्लीकेशन्स।

नीता वर्मा, 2005 : दि प्रेस एन्ड अदर ओपिनियमन मेकर्स इन दि डिस्कोस आन दि रिजर्ववेशन ईशू पश्ष्ठ 193–224 इन हरनाम सिंह वर्मा (सम्पादक), दि ओबीसीज एन्ड दि रुलिंग क्लासेज इन इनिडया, नई दिल्ली और जयपुर, रावत पब्लीकेशन्स।

ए० के० वर्मा, 2004 : कास्ट एन्ड पोलटिकल मोवीलाइनेशन, इकोनामिक एन्ड पोलिटिकल वीकली, दिसम्बर 18 : 5463–5466.

हरनाम सिंह वर्मा, 2007 : रिवर्स सोसल ओसमासिस इन उत्तर प्रदेश, इकोनामिक एन्ड पोलीटिकल वीकली, मार्च 10–16:

हरनाम सिंह वर्मा, 2009 :आइडियालाजी एन्ड कास्ट इन उत्तर प्रदेशः ए थ्योरी आफ सोशलल ओसमासिस एन्ड रिवर्स सोशल ओसमासिस इन अरुण कुमार सिंह (सम्पादक), स्टडीज इन सोशल इक्सक्लूजन इन इनिडयन सोसइटी, लखनऊ, न्यू रायल बुक कम्पनी।